वर्तमान समय में महात्मा गाँधी के ग्रामीण विकास सिद्धान्तों की सार्थकता

सतीश कुमार
पूर्व शोध छात्र, राजनीति विज्ञान एस०एम०जे०एन० कालेज, हरिद्वार

सारांश

विकास केवल एक ही दिशा तथा आर्थिक विकास के ही समान नहीं किया जाता है, इसकी अन्य दिशायें भी हैं। ये दिशायें राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक होती हैं। विकास एक बहुआयामी घटनाक्रम है। विकास केवल विज्ञान, तकनीकी ज्ञान में प्रगति और सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product, G.N.P.) में वृद्धि ही नहीं बल्कि आर्थिक और सामाजिक न्याय, जीवन की समानता में प्रगति, मानवीय तथा भौतिक साधनों के अच्छे प्रयोग से सम्भव है। विकास एक पहलू से दूसरे पहलू में परिवर्तन दूसरे को प्रभावित करता है। उदाहरणस्वरूप, एक देश में शिक्षा प्रणाली रोजगार को प्रभावित करती है जो भविष्य में राष्ट्र के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।

गाँधी जी के आर्थिक सिद्धान्त हमारे लिए बहुमूल्य निधि हैं, उन्होंने हमें जो विचार दिए उनमें भारत का भविष्य छिपा था, वे भविष्य दृष्टा थे, वे आर्थिक समस्याओं के मूल कारणों को खोजकर उसका समाधान करने में विश्वास रखते थे। तात्कालिक समाधान पर वे कम विश्वास करते थे। गाँधीजी द्वारा सुझाये गये तरीके आज भी उतने ही सार्थक हैं एवं उनकी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि तब थी। हमने आजादी मिलने के बाद गाँधीजी के विचारों, सिद्धान्तों का सही ढ़ंग से उपयोग नहीं किया। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे–छोटे उद्योगों का जाल बिछाना होगा, जो न केवल गरीबी एवं बेरोजगारी को दूर करेगा बल्कि आय की असमानता में कमी तथा राष्ट्रीय आय में यथेष्ट वृद्धि करेगा।

मूल शब्द– ग्रामीण विकास, गाँधीवाद

आँकड़ों के स्रोत

इस शोध पत्र हेतु द्वितीयक स्रोत यथा– प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों एवं लेखों का उपयोग किया गया है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध–पत्र में ग्रन्थालय अध्ययन पद्धति तथा विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

(i) वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य की समस्याओं का समाधान खोजना,
(ii) महात्मा गाँधी के ग्रामीण विकास सिद्धान्तों की सार्थकता को उजागर करना,
(iii) महात्मा गाँधी के विचारों से सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजना;
(iv) महात्मा गाँधी के ग्रामीण विकास के सिद्धान्तों की वर्तमान में क्या सार्थकता है?

प्रस्तावना

देश के सर्वांगीण सामाजिक एवं आर्थिक विकास में ग्रामीण विकास का स्थान प्रमुख है। देश की प्राचीन एवं अर्वाचीन व्यवस्था को देखने पर ऐसा अनुभव होता है कि ग्रामीण विकास का दर्शन नवीन नहीं बल्कि प्राचीन है। वेद एवं उपनिषद् काल में भी ग्रामीण प्रशासन, अर्थव्यवस्था एवं विकास के दर्शन चर्चित रहे हैं।[1] मध्ययुगीन काल में भी स्थानीय प्रशासन को प्रधानता दी गयी थी। अंग्रेजी शासन काल में ऐसे कार्यकलापों में काफी परिवर्तन एवं ह्रास हुआ। लेकिन बीसवीं सदी के मध्य में पुनः ग्रामीण विकास की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व के दो दशकों में राष्ट्रीय विकास में देश के प्रमुख नेताओं की भागीदारी को अंग्रेजी शासन ने भी स्वीकार किया। परिणामतः भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा वर्ष 1930 में पं० जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय समिति गठित की गयी। जिसका उद्देश्य देश के आर्थिक ढांचे का अध्ययन कर राष्ट्र विकास के लिये योजनाएं

1 **प्रसाद, लक्खीभूषण** (15 दिसम्बर, 1994) : *"ग्रामीण विकास योजनाऐं : बदलते आयाम"*, योजना, वर्ष– 38, अंक– 20, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली, पृ० 2 ।

तैयार करना था।[2] इस समिति में राष्ट्र के गणमान्य अर्थशास्त्रियों, बुद्धिजीवियों एवं सरकारी विशेषज्ञों को सम्मिलित किया गया था।

संवैधनिक परिपेक्ष्य में ग्रामीण विकास–

भारतीय संविधान निर्माण के समय संविधान सभा में ग्राम एवं पंचायत के बारे में विचार विमर्श किया गया। संविधान निर्माण करने वाली सभा के सदस्य यह चाहते थे कि भारतीय परम्पराओं से जुड़ी ऐसी स्वदेशी संस्थाओं की व्यवस्था की जाये जो उन आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके, जिनका सम्बन्ध भारत के पुनर्निर्माण से है। संविधान निर्मात्री सभा के सदस्य महात्मा गांधी के सत्ता के विकेन्द्रीकरण से भी प्रभावित थे। महात्मा गांधी यह मानते थे कि भारत गाँवों में निवास करता है। गांधी जी इस बात में विश्वास रखते थे कि ग्रामीणों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार करके ग्रामीण पुर्ननिर्माण का संकल्प पूरा किया जाये।

संविधान सभा के सदस्यों ने ग्राम पंचायत सम्बन्धी विचार विमर्श में गांधी जी के ग्राम दर्शन को प्रस्तुत करते हुए यह विचार प्रस्तुत किया कि भारत पंचायत राज–व्यवस्था से शासित होना चाहिए तथा स्थानीय शासन की इकाईयां ही भारत की आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकती हैं। यदि पंचायत राज सम्बन्धी संविधान में कोई व्यवस्था नहीं की जाती है तो हमें गांधी जी के विचारों का परित्याग करना होगा। विचार विमर्श के अन्त में के० संधानम द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के आधार पर राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में ग्राम पंचायतों के संगठन सम्बन्धी प्रावधान को सम्मिलित करने का निर्णय लिया गया।[3]

अतः संविधान के अनुच्छेद 40 में ग्राम पंचायतों के बारे में यह व्यवस्था की गई है कि राज्य, ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तियां प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने के योग्य बनाने के लिये आवश्यक हों।[4]

संविधान के इस अनुच्छेद का मुख्य आधार यह है कि भारत का विकास ग्रामीण जीवन के पुनर्निर्माण से ही सम्भव है। इस अनुच्छेद का उद्देश्य प्रजातंत्र को शासन की सबसे छोटी इकाई तक पहुंचाना तथा देश के निर्माण में गाँवों की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करना भी रहा है।

संविधान सभा में न केवल ग्राम पंचायतों के बारे में ही व्यवस्था की गई है, अपितु ग्रामीण विकास से सम्बन्धित अन्य पहलुओं को भी प्राथमिकता दी गई है। संविधान के अनुच्छेद 43 में यह व्यवस्था की गई है कि विशेष रूप से गाँवो में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक अथवा सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।[5]

ग्रामीण जीवन से जुड़े कृषि एवं पशुपालन को भी संविधान में स्थान दिया गया है। कृषि एवं पशुपालन को ग्रामीण अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार माना गया है। अतः ग्रामीण विकास कृषि एवं पशुपालन के विकास पर भी निर्भर करता है। इसीलिए संविधान में यह व्यवस्था की गई है कि राज्य कृषि एवं पशुपालन को आधुनिक तथा वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयत्न करेगा। साथ ही विशेषतः गायों व बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहन पशुओं की नस्ल के परिरक्षण एवं सुधार के लिए तथा उनके वधों को रोकने के लिए अग्रसर होगा।[6]

ग्रामीण विकास की मान्यता इस बात पर आधारित है कि गाँव के गरीबी रेखा से नीचे वाले ग्रामीणें एवं अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लोगों को सुधारा जाये। भारतीय संविधान में अनुच्छेद 46 में यह कहा गया है कि राज्य जनता के दुर्बल भाग विशेषतया अनुसूचित, आदिम जातियों के शिक्षा एवं अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय और सब प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।[7]

इस प्रकार भारतीय संविधान में व्यक्ति के साथ–साथ गाँव को भी एक महत्वपूर्ण आधार माना गया है।

---

2 "वही"।

3 **आर0एस0 क्षत्रिय** एवं **अन्य** (1984) : **भारत में पंचायती राज निम्न स्तर पर प्रजातंत्र,** नई दिल्ली, पृ० 66 ।

4 **भारत का संविधान** (2003) : **अनुच्छेद 40**, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, पृ० 25 ।

5 "वही"**, अनुच्छेद 43**, पृ० 26 ।

6 ''वही'', **अनुच्छेद 48**, पृ० 26 ।

7 "वही"**, अनुच्छेद 46**, पृ० 26 ।

संविधान में ग्राम पंचायत, पशुधन और कृषि के विकास एवं संवर्धन, पिछड़े एवं अनुसूचित तथा जनजातियों के लोगों के लिए सामाजिक न्याय की मान्यता गांधी जी के दर्शन से पूर्णतया प्रभावित रही है। गांधी जी स्वराज के बारे में हमेशा यह कहा करते थे कि स्वतंत्रता नीचे से प्रारम्भ होती है, इसलिए प्रत्येक गाँव, एक गणतंत्र होना चाहिए।[8]

ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में गांधीवादी दृष्टिकोण–

ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में गांधी जी के विचारों का विशेष महत्व है। गांधी जी ने ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर गहन चिन्तन किया। गांधी जी एक ऐसे विचारक थे जिन्होने भारतीय ग्रामीण जीवन को स्वयं देखा, परखा और भारतीय ग्रामीण समाज के पुनर्निर्माण के लिये अपने आर्थिक विचारों (काल, परिस्थिति तथा सामाजिक परम्पराओं) को ध्यान में रखकर जीवन शैली और जीवन स्तर को ऊँचा उठाने हेतु स्पष्ट किया। गांधी जी का यह भी चिन्तन रहा कि गाँवो की काया पलट देने से समूचे राष्ट्र का विकास सम्भव हो सकेगा। गांधी जी का नमक आन्दोलन एवं चरखा आन्दोलन स्वतंन्त्रता से पूर्व ग्रामीण विकास और आर्थिक आजादी दिलाने का प्रयास था।[9]

गांधी जी भारतीय जनमानस के जीवन के दुःखों तथा प्रतिभा को जानते थे। वे भारतीय आर्थिक शरीर के नाड़ीतन्तु का केन्द्र ग्राम को मानते थे, उनके विचार में भारत गावों में निवास करता है। किन्तु नगर निवासी विश्वास करते हैं कि भारत नगरों में निवास करता है और गाँवों का निर्माण उनकी आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिये किया गया है। गांधी जी हमेशा चिंतित रहे कि क्या ग्रामीणजन खाने के लिये भोजन तथा पहनने के लिये कपड़ा पाते हैं? और क्या उनके पास धूप तथा वर्षा से बचने के लिये छत है।[10] गांधी जी की इच्छा थी कि भारत का प्रत्येक गाँव स्वावलम्बी तथा स्वतंत्र गणराज्य बने और विकसित हो। उनकी धारणा थी कि नगर अपनी स्वयं देखरेख में सक्षम है। गाँवों को इस तरह से बदला जाना चाहिये कि वे पक्षपात, रूढ़िवादिता तथा संकीर्ण विचारधारा से ऊपर उठ सके और इसे किसी अन्य ढंग से नहीं अपितु उनके साथ रहकर, उनके दुःख–सुख में भाग लेकर, शिक्षा को फैलाकर तथा उनको चतुराईपूर्ण सूचनायें देकर किया जा सकता है। ग्रामों एवं ग्रामीण समाज की समृद्वि के सन्दर्भ में महात्मा गांधी का समग्र चिन्तन तथा श्रेष्ठ मानवीय गुणें से युक्त उनका जीवन दर्शन गाँवों की घोर गरीबी को दूर करने की प्रबल आंकाक्षा से प्रेरित था। गांधी जी में सत्यनिष्ठा, शोषित व दलित समाज के प्रति सीमा से परे स्नेह एवं संवेदनशीलता, सत्ता से मोह बिना सेवा की भावना, ईमानदारी आदि श्रेष्ठ मानवीय गुण थे। यही कारण था कि वे जिन बातों से अत्यन्त दुःखी थे उनमें एक बात गाँवों की घोर गरीबी भी थी। गांधी जी द्वारा गाँवों के विकास तथा ग्राम स्वराज्य की स्थापना के लिये निम्न कार्यक्रम प्रमुख थे– चरखा ग्रामीण कुटीर उद्योग, सहकारी खेती, ग्राम पंचायतें व सहकारी संस्थायें, राजनीतिक एवं आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीयकरण, अस्पृश्यता निवारण, मद्यनिषेद्य, बुनियादी शिक्षा आदि।[11] गांधीजी चाहते थे कि ग्रामीणजन स्वंय अपनी आर्थिक समस्याओं को समझे। अपने संसाधनों के अनुरूप स्वयं नियोजन करें तथा अपने रहन–सहन तथा जीवन स्तर को बढ़ायें। उनके ग्रामीण विकास के दर्शन से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीणजनों को यह समझना है कि स्वास्थय तथा मुद्रा का नियमित व्यय कैसे किया जाय।[12]

---

8 **कौर, परमजीत** (अक्टूबर 1988) : *"भारतीय संविधान एवं ग्रामीण विकास"*, ग्रामोदय।

9 **अग्रवाल, राकेश** (15 अक्टूबर 1993) **:** "ग्रामीण विकास के प्रयास", योजना, वर्ष– 37, अंक– 16, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, पृ० 22 ।

10 **एस0 राधकृष्णन : महात्मा गांधी ऐसेज एण्ड रिफलेक्शन ऑन हिज लॉ एण्ड वर्क्स,** प्रिपेस जेकी पब्लिशिंग हाऊस, महात्मा गांधी रोड़, बम्बई–1, पृ० 125 ।

11 **श्रीवास्तव, काशी गोपाल** (15 अक्टूबर, 1993) **:** *"गांधी जी का ग्राम स्वराज्य सम्भव है"*, योजना, वर्ष– 37, अंक– 16, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय पटियाला हाऊस, नई दिल्ली, पृ० 6 ।

12 **दत्त, धीरेन्द्र मोहन** (1973) **: महात्मा गांधी का दर्शन**, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, पृ० 63 ।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गांधीजी के ग्रामीण विकास सिद्धान्तों की सार्थकता–

गाँधी जी ने गाँवों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक उत्थान हेतु अपना सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसमें दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतू एक ग्राम दूसरे ग्राम पर निर्भर न रहे,; किन्तु उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि कुछ मांगे ऐसी भी हो सकती हैं, जिनके लिये एक ग्राम को दूसरे ग्राम पर प्रत्येक दशा में निर्भर रहना पड़ेगा। निश्चित रूप से एक ग्राम कुछ ग्राम समूहों के वृत्त से सम्बन्धित होगा, जिनमें वह अपनी अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। ऐसे ग्रामों के वृत्तों में स्वावलम्बन उत्पन्न होगा। यदि इस वृत्त में भी कोई मांग पूर्ण नहीं हो पायी तो तदनुसार दूसरा वृत्त उस मांग को सन्तुष्ट करने मे सफल हो सकता है।[13] गांधी जी का मानना था कि भारतीय गाँवों तथा ग्रामीणें का कल्याण नैतिक अर्थशास्त्रीय पद्धति, त्याग–तपस्या की भावना, सहकारिता, ग्रामीण उद्योगों को सर्वोच्च प्राथमिकता, आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीयकरण, आत्मनिर्भता तथा शक्ति से ही सम्भव है।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के द्वारा गांधी जी ने प्रत्येक गाँव को 'ग्राम गणतंत्र' को संज्ञा दी जो आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति के लिये स्वावलम्बी होगा। किन्तु वर्तमान भारत में भारतीय नियोजन में विदेशी तरीकों को प्राथमिकता दी जाती रही है। ग्रामीण योजना इकाई को अभी तक किसी योजना में स्वीकृत नहीं किया गया। ग्राम स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक नियोजन करने का कोई प्रयास नहीं किया गया, जबकि विगत 75 वर्षों की विफलताओं से ग्रामीण नियोजनकर्त्ताओं को शिक्षा लेनी चाहिये थी। दुर्भाग्य है कि भारतीय नीति निर्धारकों तथा योजनाकारों को अभी भी गांधी जी के विचार प्रभावित नहीं कर पाये हैं। इसीलिये स्वतंत्रता के 75 वर्षों के बाद भी ग्रामीण विकास की दिशा में कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं हुआ है।

भारतीय ग्रामीण विकास नियोजन विदेशी मॉडलों के आधार पर सीधे देश की राजधानी से विकासखण्ड स्तर तक डाक भेज कर हो रहा है।[14] केन्द्रीय नियोजन प्रणाली की सभी बुराइयां परिलक्षित हो रही है। भारतीय राष्ट्रीय नीति–निर्धरक तथा नेतृत्व करने वाले व्यक्तित्व अपने तक ही सीमित हैं।

निष्कर्ष–

ग्रामीण विकास एक सतत् प्रक्रिया है। वह एक कार्यक्रम के निष्पादन के मूल्यांकन अथवा एक नये कार्यक्रम के निर्माण एवं क्रियान्वयन या बुद्धिजीवियों को अपने केन्द्र बिन्दु को तीक्ष्ण बनाने में ध्यान आकर्षित करती रहती है। अतः विचार–विमर्श तथा अध्ययनों में ग्रामीण विकास को अधिकारिक स्थान मिलना चाहिए। ग्रामीण लोगों के एक बड़े समुदाय को व्यावसायिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि ग्रामीण लोगों के खोये हुए विश्वास को पुनर्स्थापित करना है ताकि वे साहस के साथ चुनौतियों का मुकाबला कर सकें। ग्रामीण क्षेत्रों की संरचना, संगठन, संभाग काफी हद तक बदले जाने के पश्चात् भी विकास की प्रक्रिया जारी रहनी चाहिए।

अन्तिम विश्लेषण में, विकास के लिये इच्छा, इस प्रक्रिया की दिशा तथा जो गति यह पकड़ती है– यह सब लोगों की इच्छा पर निर्भर करती है। ग्रामीण विकास की विभिन्न संस्थाएं लोगों विशेषकर गाँव के लोगों तथा विद्यार्थी समुदाय की ऊर्जा को काम में लेने तथा उनके प्रयासों के लिए संस्थागत तथा संगठनात्मक मार्ग प्रदान करने में सहायक हो सकती हैं। आज देश का वातावरण ग्रामीण परिवेश को उन्नत करने तथा ग्रामीण संस्कृति के पुनर्निर्माण करने की परिवर्तित कार्यनीति का सुचालक बना हुआ है। हमें इस अनुकूलता को पूर्णरूप से दोहराने की आवश्यकता है।

---

13 **गाँधी, मोहनदास करमचन्द** : **सर्वोदय**, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, पृ० 20 ।

14 **बिष्ट, नारायण सिंह : भारत में ग्रामीण विकास**, रोहिणी प्रिंटर्स तथा पब्लिशर्स, 4 बी नेशविला रोड़, देहरादून, पृ० 12 ।